International Journal of All Research Education and Scientific Methods (IJARESM), ISSN: 2455-6211
Volume 9, Issue 10, October-2021, Impact Factor: 7.429, Available online at: www.ijaresm.com

श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित योग एवं वर्तमान समय में उसकी प्रासांगिकता

श्री विश्वजीत वर्मा[1], डॉ0 नवीन चन्द्र भट्ट[2], श्री दीपक कुमार[3], कु0 मोनिका[4] , श्रीमति विद्या[5]

[1]शोधार्थी ,योग विज्ञान विभाग / सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय , अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड /भारत
[2]विभागध्यक्ष (सहायक प्राध्यापक), योग विज्ञान विभाग / सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय , अल्मोड़ा /भारत
[3] सहायक प्राध्यापक,योग विभाग / उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय ,हल्द्वानी , उत्तराखण्ड /भारत
[4]शोधार्थी, मनोविज्ञान विभाग / सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय , अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड /भारत
[5]शोधार्थी, योग विज्ञान विभाग / सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय , अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड /भारत

----------**********----------

सारांश

भारतीय गौरवमयी संस्कृति एवं इतिहास में शाश्वत, सारगर्भित , सार्वभौमिक ज्ञान से परिपूर्ण अनेकानेक ग्रन्थ मिलते है | श्रीमद्भगवद्गीता अध्यात्म एवं यौगिक ग्रंथों में से एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण श्रेष्ठ ग्रन्थ है | जिसमें प्रसिद्ध महाभारत युद्ध के रण क्षेत्र में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा विषाद ग्रस्त, द्वंद्व से युक्त अर्जुन को कर्तव्य पथ के बोध हेतु बहुत ही व्यावहारिक उपदेश किया गया है | शरीर एवं आत्मा की भिन्नता तथा आत्मा की अनश्वरता, शाश्वत दिव्य स्वरुप को स्पष्ट करते हुए निष्काम कर्म योग का उपदेश किया गया है | चंचल मन को नियंत्रित करने हेतु अभ्यास – वैराग्य रूप दो मुख्य उपाय बताये गये है | सुख-दुःख, जय-पराजय, हानि-लाभ, मन-अपमान, सिद्धि-असिद्धि आदि में सम रहते हुए कर्तव्य कर्म का निष्ठा पूर्वक निर्वहन रूप समत्व योग, ध्यान एवं भक्तियोग आदि का व्यावहारिक उपदेश मिलता है | जो व्यक्ति को न केवल शारीरिक , मानसिक स्वास्थ्य को प्रदान करने वाला है बल्कि आदर्श व्यक्तित्व, शैक्षिक , सामाजिक,नैतिक, अध्यात्मिक आदि सदगुणों के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है | इस प्रकार से यदि देखा जाए तो आज के वर्तमान परिस्थिति में स्वस्थ, सबल, सुख- शांति व आनंदपूर्ण श्रेष्ठ राष्ट्र एवं विश्व के निर्माण में यह अत्यंत ही प्रासांगिक एवं महत्वपूर्ण हो जाता है |

कूटशब्द - निष्काम कर्मयोग, भक्तियोग, श्रीमद्भगवद्गीता, ज्ञानयोग |

प्रस्तावना

भारतीय आर्ष वांग्मय ज्ञान- विज्ञान से परिपूर्ण पुरातन एवं सर्वोपयोगी है | अध्यात्म व योग विषयक ग्रंथो में प्रस्थान त्रयी ग्रंथो का अपना विशेष स्थान व महत्त्व है जिसके द्वारा साधक मोक्ष प्राप्ति (दुखों की आत्यंतिक निवृत्ति) के मार्ग पर सफलतापूर्वक प्रस्थान कर सकता है। वे प्रस्थान त्रयी ग्रन्थ है- गी ता, उपनिषद् एवम् ब्रह्मसूत्र ।इस में से एक श्रीमद्भगवद्गीता है जिससे इसकी महिमा व् महत्व का सहज अनुमान किया जा सकता है ।श्रीमद्भगवद्गीता महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित प्रसिद्ध महाकाव्य महाभारत के अंतर्गत वर्णित है जिसका उपदेश योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण कुरुक्षेत्र युद्ध भूमि में अपने सखा अर्जुन को देते है। जिसमें अध्यात्म , दर्शन व योग के गूढ़ रहस्यों को सरल बोधगम्य रूप से अर्जुन के अवसाद व् जिज्ञासा के समाधान हेतु उपदेश किये है। जिसमें योग के विभिन्न धाराओं जैसे – ज्ञान , कर्म , भक्ति एवं ध्यान योग आदि का वर्णन मिलता है | जिसके द्वारा वर्तमान समय के समस्याओं से मुक्त हुआ जा सकता है | इसकी व्यापक उपयोगिता (महत्ता) को देखते हुए यह आज के समय में स्वास्थ्य , शिक्षा, सुरक्षा, आत्म विकास आदि में अत्यंत ही प्रासांगिक हो सकता है |

अध्ययन की आवश्यकता -

आधुनिक विज्ञान के उत्कर्ष के इस वर्तमान समय में जहां मनुष्य नित्य प्रति अनगिनत उपलब्धियां हासिल करते जा रहे हैं वही अनेकानेक समस्याओं का भी सामना करने को विवश हो रहे हैं | सुख एवं एशोआराम के साधनों में जितनी अधिक वृद्धि हो रही है। उतनी ही विकृत जीवन शैली के कारण विभिन्न प्रकार के शारीरिक मानसिक रोगों की भी वृद्धि हो रही है। जिससे मनुष्य सुख शांति के इतने साधन जुटा लेने के बाद भी वास्तविक सुख शांति को प्राप्त कर पाने में स्वयं को अक्षम पा रहा है। चिंता, तनाव, अवसाद जैसे मानसिक विकारों साथ ही विभिन्न शारीरिक रोगों से ग्रस्त लोगों को संख्या में निरन्तर हो रहे वृद्धि तथा समाजिक समस्याओं जैसे - चोरी, हत्या, धोखा , छल, बलात्कार जैसे

अपराधों की वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है की इसके समाधान हेतु उसके मूल कारणों को समझते हुए उसके समूल नाश का प्रयत्न किया जाय। श्रीमद्भगवद्गीता इस संबंध में बहुत ही उपयोगी सहायक साधन के रूप में प्रतीत होता है। क्योंकि महाभारत काल के समय जब अनीति अत्याचार के विरुद्ध महाभारत महासंग्राम में अर्जुन विषाद ग्रस्त हो कर अपने कर्तव्य मार्ग से विचलित हो जाता है तब भगवान श्री कृष्ण ना केवल उसके अवसाद जो कि एक मानसिक विकार हैं उसका समाधान करते हैं बल्कि कर्तव्य पथ तथा उस पर चलने हेतु विभिन्न प्रकार के उपायों के रूप में योग के तत्वों का व्यवहारिक वर्णन करते हैं जो गीता के रूप में उपलब्ध है । गीता जीवन जीने की कला के रूप में जीवन की समस्याओं से पार पाने हेतु अत्यंत उपयोगी योग ग्रंथ है जो इस संदर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण हो सकता है । इसी दृष्टि से शोधार्थी को यह अत्यंत ही आवश्यकता महसूस होता है कि श्रीमद्भागवत गीता में वर्णित योग तथा वर्तमान समय उसकी क्या प्रासंगिकता है , इसका शोध अध्ययन किया जाए।

अध्ययन का महत्व -

युद्ध जैसे विकट परिस्थिति में भगवान श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को उपदेशित ज्ञान, कर्म, भक्ति, योग आदि से परिपूर्ण श्रीमद्भागवत गीता एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसका प्रत्येक अध्याय एक योग के नाम से प्रसिद्ध है। जिस के कारण उस समय अर्जुन अपने मानसिक विषाद से मुक्त हो कर अपने कर्तव्य पथ को पहचान कर धर्म एवं लोक कल्याण के पुरुषार्थ में संलग्न हो कर धन्य हुआ। वास्तव में अर्जुन रूपी मनुष्य जो इस जीवन रूपी संग्राम में निरंतर रत है उसे सुख, शांति एवं जीवन लक्ष्य की प्राप्ति हेतु श्रीमद्भगवद्गीता बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकता है। गीता में कर्म कैसे किया जाना चाहिए और सुख तथा संतोष की प्राप्ति कैसे संभव हो इस हेतु निष्काम कर्म योग का वर्णन हुआ है जो निष्काम कर्म की प्रेरणा प्रदान करता है। मन एवं इंद्रियों की चंचलता को नियंत्रित कर बुद्धि कोई हो स्थिर करने हेतु अभ्यास वैराग्य रूपी दो मुख्य उपायों का उपदेश किया है जिससे व्यक्ति मन को नियंत्रित कर अपने लक्ष्य पर केंद्रित हो कर सफलता प्राप्त कर सके। आत्मा की अमरता एवं उसके दिव्य स्वरूप का वर्णन हुआ है जिससे व्यक्ति केवल भौतिक सुख - दुःख , हानि - लाभ न सोचकर समग्र दृष्टिकोण अपना कर भटकाव से बचकर श्रेष्ठ पथ का चयन कर सके । विभिन्न प्रकार योग अभ्यासों वर्णन किया गया है जिसके अभ्यास से व्यक्ति शारीरिक मानसिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य को प्राप्त कर सकता है । साथ ही विभिन्न प्रकार के मनोसामाजिक, पारिवारिक एवं वैश्विक समस्याओं का भी समाधान सहज हो सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य -

1. श्रीमद्भगवद्गीता के व्यवहारिक महत्ता को स्पष्ट करना।
2. श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित योग का अध्ययन करना।
3. समग्र स्वास्थ्य में श्रीमद्भगवद्गीता की भूमिका का अध्ययन।
4. श्रीमद्भगवद्गीता का वर्तमान समय में प्रासांगिकता का अध्ययन।

समस्या का कथन - "श्रीमद्भगवद्गीता मे वर्णित योग एवं वर्तमान समय में उसकी प्रासंगिकता का अध्ययन।"

शोध विधि - प्रस्तुत शोध कार्य में श्रीमद भगवत गीता में वर्णित योग का वर्तमान समय में प्रासंगिकता पर आधारित है जो योग के व्यवहारिक एवं दार्शनिक पक्ष से संबंधित है। जिसमें श्रीमद्भागवत गीता में वर्णित व्यवहारिक एवं दार्शनिक पक्षों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार से प्रस्तुत शोध कार्य की पूर्णता हेतु विवेचनात्मक एवं वर्णात्मक शोध विधि को प्रयुक्त किया गया है।

श्रीमद्भगवद्गीता परिचय व मुख्य विषय वस्तु -

श्री गीता जी में भगवान ने योग प्राप्ति या ईश्वर प्राप्ति के लिए मुख्य दो मार्ग बताए एक सांख्य योग दूसरा कर्म योग उनमें संपूर्ण पदार्थ मृगतृष्णा के जल की भांति अथवा स्वप्न की सृष्टि के सदृश्य माया में होने से माया के कार्य संपूर्ण गुण ही गुणों में बढ़ते हैं ऐसे समझ कर मन इंद्रियों और शरीर द्वारा होने वाले संपूर्ण कर्मों में कर्ता पन के अभिमान से रहित होना तथा सर्वव्यापी सच्चिदानंद घन परमात्मा के स्वरूप में एक ही भाव से नित्य स्थित रहते हुए सच्चिदानंद घन वासुदेव के सिवाय अन्य किसी के भी होने का भाव ना रहना यही सांख्ययोग का साधन है।

सब कुछ भगवान का समझ कर फिर भी ऐसी भूमि समत्व भाव रखते हुए आसक्ति और फल की इच्छा का त्याग कर भगवद आज्ञा के अनुसार केवल भगवान के लिए ही सब कर्मों का आचरण करना तथा श्रद्धा भक्ति पूर्वक मन वाणी और शरीर से सब प्रकार भगवान की शरण होकर नाम , गुण और प्रभावसहित उनके स्वरुपका निरंतर चिंतन करना (6/47) यह कर्मयोग का साधन है।

श्रीमद्भागवत गीता के अध्याय व वर्णित मुख्य योग

1.पहला अध्याय-अर्जुन विषाद योग

2.दूसरा अध्याय-सांख्य योग
3.तीसरा अध्याय-कर्मयोग
4.चौथा अधयाय-ज्ञान कर्म सन्यास योग
5.पाचवां अध्याय -कर्म संन्यास योग
6.छठा अध्याय -आत्मसंयम योग
7.सातवां अध्याय - ज्ञान विज्ञान योग
8.आठवां अध्याय -अक्षर ब्रह्मयोग
9.नौंवा अध्याय - राजविद्याराजगुह्य योग
10.दसवाँ अध्याय -विभूति योग
11. ग्यारहवां अध्याय - विश्वरूप दर्शन योग
12.बारहवां अध्याय -भक्तियोग
13.तेरहवां अध्याय -क्षेत्र क्षेत्रज्ञ योग
14.चौदहवां अध्याय -गुणत्रय विभागयोग
15.पन्द्रहवां अध्याय -पुरुषोत्तम योग
16सौलाहवं अध्याय - देवासुर सम्पद्विभाग योग
17.सत्रहवाँ अध्याय -श्रद्धात्रय विभाग योग
18. अठारहवां अध्याय -मौक्ष संन्यास योग

गीता सभी उपनिषदों , पुराणों एवं दर्शनों का सार है योग के आदि प्रवर्तक , योग योगेश्वर ने श्रीमदभगवद्गीता मे अर्जुन के माध्यम से समाज को योग स्वरूप का उपदेश दिया है । मनुष्य किस प्रकार योग को अपनाकर शाश्वत सुख प्राप्त कर सकता है ।

गीता में योग की परिभाषाएं -

योगस्थरू कुरु कर्माणी संगम त्यक्तवा धनंजय।
सिध्यासीध्यों समोभूत्वा समत्वम योग उच्यते।।2/48।।

अर्थात - हे धनंजय तू समस्त इच्छाओं(कामनाओं) का त्याग कर, सिद्धि- असिद्धि में सम रह कर योग मे स्थित हो कर कर्म कर , क्योकि समत्वम् अर्थात समता को ही योग कहा जाता है ।

बुद्धि युक्तों जहातीह उभे सुकृतदुसकृते ।
तस्मात योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम ।। 2/50 ।।

अर्थात - समत्व बुद्धि वाला मनुष्य पाप पुण्य दोनों से इस लोक मे मुक्त रहता है । इस लिए तू समत्व योग को अपना। क्योकि यह समत्व योग कर्मों मे कुशलता वाला है अर्थात कर्मबंधन से मुक्त होने का उपाय है ।

इसके अतिरिक्त गीता मे योग की परिभाषा भिन्न भिन्न स्थानो मे भिन्न भिन्न रूप मे है , जिसमे समता, निस्पृहता , तथा दुख संयोग के वियोग को योग कहा जाता है।

तं विद्याद दुखासंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगो अनिर्विन्नाचेत्सा ।। ६/२३ ।।

अर्थात- जो विद्या दुख रूप संसार के संयोग से रहित तथा जिसका नाम योग है उसे नाम जानना चाहिए ।वह योग बिना उद्वेगित अर्थात धैर्य और उत्साह युक्त चित्त से निष्चय पूर्वक करना चाहिए।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता मे कहा है कि योगी, तपस्वियों मे श्रेष्ठ है और शास्त्र ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ है ।अतः हे अर्जुन तुम योगी बन । मन की एकाग्रता ही योग मे प्रवेश दिलाती है । तथा योग के लिए अभ्यास - वैराग्य उपाय है ।

योग के मुख्य प्रकार

1.**सांख्य/ज्ञान योग** - माया से उत्पन्न हुये गुण ही गुणों मे बरतते है , ऐसा समझकर तथा मन, इंद्रिय और शरीर द्वारा होने वाले सम्पूर्ण क्रियाओ मे कर्तापन के अभिमान से रहित होकर सर्वव्यापी सच्चिदानंद घन परमात्मा में एकीभाव से स्थित रहने का नाम 'ज्ञानयोग' है , इसी को 'सन्यास योग' 'सांख्ययोग' आदि नाम से कहा गया है ।

आत्म स्वरुप का वर्णन– ज्ञान योग के अंतर्गत आत्मा के अमर अविनाशी स्वरुप का वर्णन करते हुए गीता के दूसरे अध्याय (2/19) में कहते है कि "इस आत्मा को जो व्यक्ति मारने वाला समझाता है तथा जो इसको मरा (हुआ) मानता है वे दोनों ही लोग (इस आत्मा को) नहीं जानते क्योकि यह आत्मा वास्तव में न तो किसी को मरता है और न ही किसी के द्वारा मारा जाता है।" और यह आत्मा किसी काल में भी ना तो जन्म लेता है और न ही मृत्यु को प्राप्त होता है तथा यह न उत्पन्न होकर फिर होने वाला है क्योंकि यह अजन्मा (जिसका जन्म नहीं हुआ) नित्य सनातन और पुरातन है शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता है।(2/20)

मृत्यु के समय आत्मा की स्थिति वैसे ही जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्याग कर दूसरे नए वस्त्रों को धारण करता है ठीक वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीर को छोड़ कर दूसरे नए शरीर को प्राप्त करता है।(2/22)

इस आत्मा को शस्त्र नहीं काट सकते है ना ही आग जला सकती है और जल भी गला(भींगा) नहीं सकता तथा ना ही वायु सुखा सकता है | क्योकि यह आत्मा अच्छेद्य , अदह्य, अक्लेद्य और अशोष्य है तथा आत्मा नित्य , सर्वव्यापी , अचल , स्थिर रहने वाला और सनातन(शाश्वत) है ।(2/23-24) यह आत्मा अव्यक्त(सूक्ष्म) है अचिन्त्य और विकार रहित कहा जाता है। इसलिए हे अर्जुन तू शोक करने योग्य नही है अर्थात तुझे शोक करना उचित नहीं है ।(2/25) क्योंकि जिसका शोक करना चाहिए वह स्वयं शुद्ध, बुद्ध, अनश्वर, सनातन है फिर शोक किसका ? और शरीर तो मात्र उसका साधन है जो जड प्रकृति से निर्मित और नश्वर है | अत: स्थिर बुद्धि से युक्त विवेकवान मनुष्य को व्यर्थ ही शोक नहीं करना चाहिए |

स्थितप्रज्ञ का लक्षण -

अर्जुन के जिज्ञासा से उत्पन्न प्रश्न जो वे श्री कृष्ण से पूछते है कि "हे केशव! समाधि में स्थित परमात्मा को प्राप्त हुए स्थिर बुद्धि पुरुष का क्या लक्षण है, वह स्थिर बुद्धि पुरुष कैसे बोलता है , कैसे बैठता है और कैसे चलता है ?" इसके उत्तर में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को स्थित प्रज्ञ पुरुष का लक्षण बताते हुए कहते है की "जिस काल में यह पुरुष (मनुष्य) मन में स्थित संपूर्ण कामनाओं (इच्छाओं) को भलीभांति त्याग देता है और आत्मा से आत्मा(स्वयं) में ही संतुष्ट रहता है उस काल में वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है । जो पुरुष सर्वत्र से रहित हुआ था उस उस शुभ या अशुभ वस्तुओं को प्राप्त होकर ना प्रसन्न होता है और ना द्वेष करता है उसकी बुद्धि स्थिर है अर्थात वह स्थित प्रज्ञ है ।।(2/57)

आगे कछुआ के उदाहरण द्वारा स्थितप्रज्ञ व्यक्ति के लक्षण बताते है कि" जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को जैसे समेट लेता है वैसे ही जब या पुरुष इंद्रियों के विषयों से इंद्रियों को सब प्रकार से हटा लेता है तब उसकी बुद्धि स्थिर होती है।" (2/58)

मनुष्य का विषयों के चिंतन से उन विषयों में आसक्ति हो जाती है आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामना में विघ्न पढ़ने से क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध से अत्यंत मूढ़ भाव उत्पन्न हो ता है, मुढ भाव से स्मृति में भ्रम होता है स्मृति में भ्रम हो जाने से बुद्धि(ज्ञान शक्ति) का नाश हो जाता है तथा बुद्धि का नाश होने से वह पुरुष(मनुष्य) अपनी स्थिति से गिर जाता(नष्ट हो जाता) है।(2/62-63) इसलिए मनुष्य को चाहिए की वह विषयों के पीछे व्यर्थ भागना छोड़कर अपने आत्म भाव में स्थित होने का प्रयास करे | जो पुरुष संपूर्ण कामनाओं(इच्छाओं) को त्याग कर ममता रहित , अहंकार रहित और स्पृहा रहित हुआ विचर ण करता है वही परम शांति को प्राप्त होता है। भगवन श्री कृष्ण कहते है कि हे अर्जुन यह ब्रह्म को प्राप्त हुए पुरुष की स्थिति है इस को प्राप्त होकर योगी कभी मोहित नहीं होता और अंत काल में भी इस ब्राह्मी स्थिति में स्थित होकर ब्रह्मानंद(परमानन्द) को प्राप्त हो जाता है।(2/71-72)

2. कर्म योग व कर्म के प्रकार(सकाम-निष्काम)-

भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते है - हे निष्पाप अर्जुन ! इस लोक मे दो प्रकार की निष्ठा मेरे द्वारा पहले कही गयी है। उनमे सांख्ययोगियों की सांख्य निष्ठा तो ज्ञान योग से और योगियो की निष्ठा कर्मयोग से होती है | (3/3) अर्थात मुख्य रूप से योग के दो मार्ग है ज्ञान(सांख्य) योग एवं कर्म योग |

कर्मयोग - फल और आसक्ति को त्यागकर निष्काम भाव से भगवद आज्ञा अनुसार केवल भगवार्थ समत्व बुद्धि से कर्म करने का नाम 'निष्काम कर्म योग है , इसी को समत्वयोग, बुद्धियोग , कर्मयोग आदि नामों से कहा जाता है।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यम पुरुशोश्नुते।
न च सन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ।। ३/४ ।।

अर्थात - मनुष्य न तो कर्मों का आरम्भ किये बिना निष्कर्मता को यानी योगनिष्ठा को प्राप्त होता है और न ही कर्मों के केवल त्यागमात्र(छोड़ देने) से सिद्धि यानि सांख्य निष्ठा को ही प्राप्त होता है। इसका कारण स्पष्ट करते हुए आगे कहते है कि-

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठात्यकर्मकृत।
कार्यते ह्यवश: कर्म सर्व: प्रकृतिजैर्गुणे:।३/५।

अर्थात - कोई भी मनुष्य किसी भी काल(समय) में क्षणमात्र भी बिना कर्म किये नहीं रह सकता, क्योकि सारा मनुष्य समुदाय प्रकृतिजनित गुणों द्वारा परवश हुआ कर्म करने के लिए बाध्य (विवश) किया जाता है।

इसलिए जो मनुष्य " इस लोक में इस प्रकार परम्परा से प्रचलित सृष्टि चक्र के अनुकूल नहीं बरतता अर्थात अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता , वह इन्द्रियों के द्वारा भोगो में रमण करने वाला पापायु पुरुष व्यर्थ ही जीता है। (३/१६) परन्तु जो मनुष्य आत्मा में ही रमण करने वाला और आत्मा में ही तृप्त(संतुष्ट) हो, उसके लिए कोई कर्तव्य (शेष) नहीं रहता। ३/१७।।

तस्मादसक्तरू सततं कार्यं कर्म समाचार।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पुरुषः।।३/१९।।

इसलिए मनुष्य को निरंतर आसक्ति रहित होकर सदा कर्तव्य कर्म को भालीभांति करता रहना चाहिए। क्योकि आसक्ति से रहित होकर निष्काम कर्म करता हुआ मनुष्य परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

जानकादि ज्ञानीजन भी आसक्ति रहित होकर कर्मद्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त हुए थे। इसलिए तथा लोकसंग्रह को देखते हुए भी तू कर्म करने को ही योग्य है अर्थात तुझे कर्म करना उचित है।३/२० ।। वास्तव में सम्पूर्ण कर्म सब प्रकार से प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते है तो भी जिनका अंतःकरण अहंकार से मोहित हो रहा है , ऐसा अज्ञानी मनुष्य 'मै' कर्ता हूँ ऐसा मानता है जबकि वास्तव में कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा किये जाते है |(३/२७) | परन्तु गुणविभाग और कर्म विभाग के तत्व को जाननेवाले ज्ञानयोगी (मनुष्य) सम्पूर्ण गुण ही गुणों में बरत रहे है , ऐसा समझ कर उनमे आसक्त नही होता।(३/२८)।

इसलिए भगवान कहते है –"मुझ अंतर्यामी परमात्मा में लगे हुए चित्त द्वारा सम्पूर्ण कर्मों को मुझ में अर्पण करके आसक्ति रहित , ममता रहित और संताप रहित होकर युद्ध (कर्तव्य कर्म)कर।(३/३०)।

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मण:।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गति: ।। ४/१७।।

अर्थात – मनुष्य को कर्म का स्वरुप भी जानना चाहिए और अकर्म का स्वरुप भी जानना चाहिए तथा विकर्म का स्वरुप भी जानना चाहिए क्योकि कर्म की गति बहुत ही गहन होती है।

जो मनुष्य कर्म में अकर्म को और जो अकर्म में कर्म को देखता है , वह मनुष्यो में बुद्धिमान है और वह योगी समस्त कर्मों को करने वाला है।(४/१८)।

जिस मनुष्य के सम्पूर्ण शास्त्रसम्मत कर्म बिना कमाना और संकल्प के होते है तथा जिसके समस्त कर्म ज्ञान रूप अग्नि द्वारा भस्म हो गए है , उस महापुरुष को ज्ञानीजन भी पण्डित कहते है।। (४/१९)। तथा जो बिना कमाना(इच्छा)के अपने आप प्राप्त हुए पदार्थ में सदा संतुष्ट रहता है , जिसमें इर्ष्या का सर्वथा आभाव हो , जो हर्ष - शोक आदि द्वंद्वो से सर्वथा रहित हो गया है | ऐसा कर्मयोगी मनुष्य सिद्धि और असिद्धि में सम रहने वाला कर्म करता हुआ भी नहीं बंधता।(४/२२)।

3. ध्यान योग

संकल्प से उत्तपन्न होने वाली सम्पूर्ण कामनाओ को निःशेषरूप से त्याग कर और मन के साथ इन्द्रियों के समुदाय को सभी ओर से भली भाति रोककर- क्रम-क्रम से अभ्यास करता हुआ उपरती को प्राप्त हो तथा धैर्ययुक्त बुद्धि के द्वारा मनको परमात्मा में स्थित करके परमात्मा के सिवा और कुछ भी चिन्तन न करे। 6/25 ।।यह स्थिर न रहने वाला और चंचल मन जिस जिस शब्दादि विषय के निक्मित्त से संसार में विचरता है , उस-उस विषय से रोककर यानी हटा कर इसे बार-बार परमात्मा में ही निरुद्ध करे। ६/२६ ।।

क्योकि जिसका मन भली प्रकार शांत है , जो पाप से रहित है और जिसका रजोगुण शांत हो गया है , एसे इस सच्चिदानन्दघन ब्रह्म के साथ एकीभाव हुए योगी को उत्तम आनन्द प्राप्त होता है। ६ /२७ ।।

सभी इंद्रियों के द्वार को रोककर तथा मन को हृदय देश में स्थिर करके फिर उस जीते हुए मन के द्वारा प्राण को मस्तक में स्थापित करके परमात्मा संबंधी योग धारणा में स्थित होकर जो पुरुषों ॐ इस एक अक्षर ब्रह्म को उच्चारण करता है और उसके अर्थ स्वरूप मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिंतन करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है वह पुरुष परम गति को प्राप्त होता है।8/12-13।

4. भक्ति योग

भक्तियोग का मार्ग सतोगुणी , भावनाशील मनुष्यों के लिए उत्तम है | भजन , कीर्तन, नाम स्मरण , सेवा समर्पण आदि भक्ति योग के अंतर्गत आते है | इन्द्रियों से अतीत (उससे ऊपर श्रेष्ठ) , केवल शुद्ध हुई (निर्मल) सूक्ष्म बुद्धि द्वारा ग्रहण करने योग्य जो अनंत आनन्द है , उसको जिस अवस्था में अनुभव करता है और जिस अवस्था में स्थित यह योगी परमात्मा के दिव्य स्वरुप से विचलित नहीं होता (उस में निमग्न रहता है) ।(६/२१)।

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततर: ।
यस्मिन्स्थितो न दुखें गुरुणापि विचाल्यते ।। ६/२२।।

जिस लाभ(परमात्मा की प्राप्ति रूप) को प्राप्त होकर उससे अधिक दूसरा कुछ भी लाभ नहीं मानता और परमात्मा प्राप्ति रूप जिस अवस्था में स्थित योगी बड़े भारी दुःखसे भी चलायमान (विचलित) नहीं होता है ।।

भक्त के प्रकार- गीता में चार प्रकार के भक्तों का वर्णन हुआ है इसके लिए भगवन श्रीकृष्ण कहते है -

चतुर्विधा भजन्ते मां जना: सुकृतोअर्जुन ।
आर्ता जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।(7/16) ।

अर्थात- हे भरत वंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! उत्तम कर्म करने वाले अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी एसे चार प्रकार के भक्तजन मुझको भजते है। उनमें से नित्य मुझ में एकी भाव से स्थित अनन्य प्रेम भक्ति वाला ज्ञानी भक्त अतिउत्तम(श्रेष्ठ) है , क्योकि मुझको तत्व से जानने वाले ज्ञानी को मै अत्यंत प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मुझे अत्यंत प्रिय है।(7/17) ये सभी भक्त उदार है , किन्तु ज्ञानी भक्त तो साक्षात् मेरा स्वरुप ही है - ऐसा मेरा मत है , क्योकिक वह मेरे अनुगत मन - बुद्धि वाला ज्ञानी भक्त अति उतम गतिस्वरुप मुझमे ही अच्छी प्रकार से स्थित है। ७ /१८ ।

भक्ति के प्रकृति एवं फल

भक्ति के प्रकृति एवं उसके फलों को गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन उपदेश करते है कि -
जो जो सकाम भक्त जिन- जिन देवताओं के स्वरूप को श्रद्धा से पुज ता है उस-उस भक्तों की श्रद्धा को उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (7/21)।
तथा वह पुरुष उस श्रद्धा से युक्त होकर उस देवता का पूजन करता है और उस देवताओ से मेरे (भगवान श्रीकृष्ण) द्वारा ही विधान किये हुए इच्छित (कामना किए गये) भोगो को निसंदेह प्राप्त करता है। (7/22)

इस संसार में इच्छा और द्वेष से उत्पन्न सुख-दुख आदि द्वंद्व रूप मोह से संपूर्ण प्राणी अत्यंत अज्ञानता को प्राप्त हो रहे हैं। (7/27) परंतु निष्काम भाव से श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करने वाले जिन पुरुषों का पाप नष्ट हो गया है वे मनुष्य राग द्वेष जनित द्वंद रूप मोह से मुक्त , दृढ़ निश्चय भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं ।(7/28)।

इसलिए हे अर्जुन तू सब समय में निरंतर मेरा समरण कर और युद्ध (कर्तव्य कर्म) भी कर इस प्रकार मुझ में अर्पण किए हुए मन , बुद्धि से युक्त होकर तो निसंदेह मुझ(भगवान) को ही प्राप्त होगा ।(8/7) यह नियम है कि परमेश्वर के ध्यान के अभ्यासरूप योग से युक्त दूसरी ओर न जाने वाले चित्त(मन) से निरंतर चिंतन करता हुआ मनुष्य कर्म प्रकाश रूप दिव्य पुरुष को(परमेश्वर को) ही प्राप्त होता है।(8/8)।

जो मनुष्य सर्वज्ञ , अनादि सबके नियंता सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म सबके धारण-पोषण करने वाले अचिंत्य स्वरूप , सूर्य के सदृश नित्य चेतन प्रकाश रूप और अविद्या से अति परिशुद्ध सच्चिदानंदघन परमेश्वर का स्मरण करता है। वह भक्ति युक्त पुरुष अंत काल में भी योग बल से भृकुटि (आज्ञा चक्र) के मध्य में प्राण को अच्छी प्रकार स्थित करके फिर निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस दिव्य परम पुरुष परमेश्वर को ही प्राप्त करता है।(8/9-10) जो प्रेमी भक्तजन परमेश्वर को निरंतर चिंतन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं उस नित्य निरंतर मेरा(भगवान का) चिंतन करने वाले पुरुषों का योग क्षेम मैं स्वयं (भगवान) प्रदान कर देता हूं ।(9/22)

यद्यपि श्रद्धा से युक्त जो साकाम भक्त दूसरे अन्य देवताओं को पूजते हैं वह भी मुझ(भगवान) को ही पूजते हैं क्योंकि उनका पूजन विधि पूर्वक अर्थात ज्ञान पूर्वक है तथा संपूर्ण योगियों का मुक्ता और स्वामी भी मैं ही हूं परंतु वे मुझ परमेश्वर को तत्व से नहीं जानते इसी से वे गिरते हैं अर्थात पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। (9/23-25) जो कोई भक्त जन मेरे लिए प्रेम से पत्र , पुष्प फल, जल आदि अर्पित करता है उस शुद्ध बुद्धि , निष्काम प्रेमी भक्तों का प्रेम पूर्वक अर्पण किया हुआ वह पत्र , पुष्प आदि मैं (भगवान स्वयं) सगुण रूप से प्रकट होकर प्रीति (प्रेम) सहित खाता(ग्रहण करता) हूं।(9/26)

सबके लिए भक्ति का द्वारा सामान रूप से खुला होना – भगवान कहते है "हे अर्जुन ! स्त्री ,वैश्य, शूद्र तथा पापियों चांडाल आदि जो कोई भी हो वह सभी मेरे शरण में आकार परम गति को प्राप्त होते हैं| फिर इसमें तो कहना ही क्या है जो पुण्य श्री ब्राह्मण तथा राजऋषि भक्तजन मेरे शरण होकर परम गति को प्राप्त होते हैं इसलिए तू सुख रहित और क्षणभंगुर इस मनुष्य को प्राप्त होकर निरंतर मेरा ही भजन कर। 9/33। मुझ में (अर्पित) मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने हो, मुझको ही प्रणाम कर इस प्रकार आत्मा को मुझ में नित्य युक्त (लगा) करके मेरे परायण होकर तू मुझको ही प्राप्त होगा।(9/34)।

श्री भगवान बोले- जो भक्तजन मुझ में मन को एकाग्र कर के निरंतर मेरे भजन ध्यान में लगेंगे, श्रेष्ठ श्रद्धा से युक्त होकर मुझ सगुण रूप परमेश्वर को भजते हैं वह मुझको योगियों में अति उत्तम योगी मान्य है | परंतु जो पुरुष इंद्रियों के समुदाय को भली प्रकार वश (नियंत्रण) में करके मन, बुद्धि से परे सर्वव्यापी और सदा एकरस रहने वाले नित्य अचल , निराकार, अविनाशी ,सच्चिदानंदघन ब्रह्म को निरंतर एक ही भाव से ध्यान करते हुए भजते हैं, वे संपूर्णभूतों के हित में रत और सब में समान भाव वाले योगी मुझको ही प्राप्त होते हैं अर्थात मोक्ष को प्राप्त कर लेता है । (12/2-4)

वर्तमान समय में प्रासंगिकता

स्वास्थ्य के क्षेत्र में - गीता में स्वास्थ्य रक्षण के अत्यंत ही महत्वपूर्ण व्यवहारिक सूत्र युक्ताहार (समुचित आहार का सेवन), युक्तविहार (उचित रहन सहन) , कर्मों में उपयुक्त चेष्टा, समुचित निद्रा आदि से युक्त यौगिक जीवन शैली समस्त प्रकार के दुखों को नाश करने वाला होता है । वहीं इसके विपरीत आचरण करने वाले लोग निश्चय ही रोग, शोक , दुख आदि से पीड़ित होते हैं। साथ ही मानसिक चिंता, तनाव आदि मनोविकारों से गीता में वर्णित ज्ञान, कर्म एवं भक्ति योग के द्वारा मुक्त हुआ जा सकता है । वर्तमान समय में योग में हो रहे विभिन्न वैज्ञानिक शोध से भी स्वास्थ्य में योग की सकारात्मक भूमिका प्रकाश में आ रहे है | जिससे विभिन्न शारीरिक मानसिक रोगों के उपचार हेतु लो गों को उपयुक्त योगाभ्यास की सलाह दी जा रही है | जैसे आसनों से शरीर में दृढ़ता, आरोग्य, स्थिरता की प्राप्ति एवं द्वंद्वों का नाश होता है साथ ही शारीरिक मानसिक रोगों जैसे – चिंता , तनाव, अवसाद, सिरदर्द आदि में भी लाभकारी प्रभाव डालता है | जिससे जनमानस में योग द्वारा रोग निवारण एवं स्वास्थ्य संवर्धन के प्रति व्यापक अभिरुचि एवं विश्वास में निरंतर वृद्धि देखा जा सकता है | इस प्रकार से मनुष्य यौगिक जीवनशैली अपनाकर स्वस्थ , सबल, सुख , शांतिपूर्ण, आनंदमय जीवन जी सकते है |

शिक्षा के क्षेत्र में - विद्या अध्ययन के लिए मन की एकाग्रता अत्यन्त आवश्यक है इस हेतु गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने चंचल मन को नियंत्रित करने हेतु दो मुख्य उपाय - अभ्यास एवं वैराग्य का उपदेश किया है । जिससे मन एवं इंद्रियों को नियंत्रित कर लेने से मानसिक क्षमता, एकाग्रता आदि में वृद्धि होती है । जो शैक्षणिक उन्नति में अत्यन्त सहायक भूमिका निभाता है । साथ ही गीता के अध्ययन से छात्रों में नैतिक, समाजिक एवं आध्यात्मिक गुणों में वृद्धि होती है। आज के समय में छात्रो में एकाग्रता, स्मरण शक्ति, अवधान, बुद्धिमता आदि में वृद्धि हेतु योगाभ्यास के प्रति रूचि में वृद्धि देखी जा सकती है | न केवल भारतवर्ष बल्कि विश्व भर में योग के प्रति लोगो में काफी लगाव देखा जा रहा है | जिससे शिक्षा के क्षेत्र में योग विषय में अनेकानेक पाठ्यक्रम विभिन्न संस्थानों में संचालित किये जा रहे है | जिसके द्वारा छात्रो में योग एवं

संबंधित ग्रथों के अध्ययन से उन गुणों को जीवन में विक सित कर सही अर्थों में सुशिक्षित , सभ्य, आदर्श व्यक्तित्व संपन्न बनने की संभवना को साकार करने का प्रयास जा रहा है |

व्यक्तित्व विकास में - मनुष्य के व्यक्तित्व का उसके जीवन में सफलता, शांति, संतोष आदि में महत्वपूर्ण योगदान होता है। श्रीमद्भागवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण मनुष्यों को ज्ञान योग, निष्काम कर्मयोग एवं भक्ति योग के माध्यम से श्रेष्ठ एवं आदर्श व्यक्तित्व निर्माण के सूत्र प्रदान करते है । जिससे नकारात्मक एवं बाधक तत्वों जैसे – भय, क्रोध, ईर्ष्या, तनाव, अवसाद, अकर्मण्यता, अभिमान, शोक आदि से मुक्त हो व्यक्ति सकारात्मक सोच, आशावादी दृष्टिकोण, निष्काम कर्म एवं संतुलित समुचित आहार, विहार व विचार से युक्त होकर सुख, शांति, संतोष एवं यश को प्राप्त करता है।

सुरक्षा के क्षेत्र में – सुरक्षा की सुनिश्चितता हेतु यह आवश्यक है कि समग्र ज्ञान दृष्टि, सतत जागरूकता, प्रबल पुरुषार्थ युक्त निरन्तर कर्मशिलता से युक्त हो तथा हानि- लाभ, जय- पराजय, सिद्धि- असिद्धि के द्वंद्व से मुक्त होकर सम भाव से कर्तव्य कर्म में निरत रहना। जिससे न शारीरिक बल्कि, मानसिक , सामाजिक आदि रूप से भी सुरक्षा की भावना एवं स्थिति सुदृढ होती है। समाज में हो रहे अनीति, अत्याचार के प्रति भी जनजागरूकता, साहस एवं कर्मशीलता द्वारा सुरक्षित वातावरण का निर्माण भी संभव होता है।

समाजिक क्षेत्र में – मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसका समाज के साथ अनन्य सम्बन्ध होता है। गीता में वर्णित ज्ञान, कर्म निष्ठा, निर्मल भक्ति भाव, प्रेम, करुणा, धैर्य, साहस, प्रबल पुरुषार्थ आदि गुण सभ्य व आदर्श समाज के निर्माण हेतु अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। जाति, रंग, स्थान, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव के लिए बिना अच्छे कर्म एवं विचारों को महत्व देना। सब में अपने आत्मा को व्याप्त देखते हुए सम बुद्धि से युक्त हो राग द्वेष आदि से मुक्त हो कर्तव्य कर्म करने का उपदेश किया गया है जो आदर्श समाज के निर्माण हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्त्तमान समय में लोगों में योग के प्रति रूचि बिना किसी भेदभाव के बढती हुई देखा जा सकता है |

आध्यात्मिक उत्कर्ष में – श्रीमद्भागवद्गीता में वर्णित योग के तत्वों के निरंतर अभ्यास से साधक में अध्यात्मिक गुणों का क्रमश: विकास होता चला जाता है | जैसे – अभ्यास- वैराग्य द्वारा मन एवं इंदियों के नियंत्रण से मानसिक शक्तियों को एकाग्र करने की क्षमता प्राप्त होती है जो आगे उच्चतर अध्यात्मिक यौगिक साधना जैसे धारणा, ध्यान एवं समाधि के अभ्यास में अत्यंत सहायक होता है | समुचित आहार-विहार , समत्व दृष्टिकोण से युक्त सम बुद्धि, कर्म की कुशलता, निश्छल अनन्य भक्ति भाव, श्रद्धा एवं समर्पण से निरंतर साधक का व्यक्तित्व आध्यात्मिक उत्कर्ष को प्राप्त होता है |

श्रेष्ठ राष्ट्र के निर्माण में – राष्ट्र का निर्माण उसके नागरिकों (व्यक्ति) से होता है | अत: स्वस्थ, सबल एवं श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण उसमें निवास करने वाले व्यक्तियों के उत्तम स्वास्थ्य, साहस, पुरुषार्थ, उत्तम चरित्र आदि दिव्य गुणों से होता है | इस सम्बन्ध में श्रीमद्भागवद्गीता में स्वास्थ्य रक्षा के व्यवहारिक सूत्र का वर्णन मिलता है जैसे- समुचित आहार विहार, कर्मों में चेष्टा व समुचित निद्रा युक्त व्यक्ति का योग दुखों का नाश करने वाला होता है | साथ ही आत्मा का शाश्वत अविनाशी स्वरुप को जानकर भय, चिंता, तनाव आदि से मुक्त हो, जय – पराजय, हानि- लाभ आदि के द्वंद्व से मुक्त हो समबुद्धि से युक्त हो कर्तव्य कर्म में फल की आशा से रहित हो निष्काम कर्मयोग का उपदेश किया है | इस प्रकार गीता के स्वाध्याय से व्यक्ति में आवश्यक प्रेरणा एवं दिव्य गुणों का स्वत: विकास होता जो श्रेष्ठ राष्ट्र के निर्माण में सहायक होता है |

वैश्विक परिदृश्य में – वर्तमान समय में विश्व में व्याप्त विभिन्न समस्याओं जैसे रोग, शोक , चिंता , तनाव, अपराध , संघर्ष आदि में श्रीमद्भागवद्गीता अत्यंत सहायक सिद्ध हो सकता है | विकृत जीवन शैली , खानपान व रहन-सहन से उत्पन्न नानाविध रोगों एवं मानसिक विकारों के समाधान में उपयुक्त आहार-विहार से, समुचित कर्म, समुचित निद्रा एवं नियमित योगाभ्यास बहुत ही लाभदायक होता है | सभी प्राणियों में उस ईश्वर के अंश आत्मा को व्याप्त मानते हुए भेदभाव से रहित सबके प्रति सम भाव रखना, दुसरे व्यक्ति के धन -साधन आदि की कामना नहीं करना तथा त्याग पूर्वक (ईश्वर को समर्पित कर) भोग करना यह ज्ञान दृष्टि विश्व बंधुत्व एवं विश्व कल्याण की भावना को सुदृढ करता है |

पहली बार 21 जून 2015 को भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी जी द्वारा प्रथम अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस 192 देशों के साथ मनाया गया जो योग के प्रति वैश्विक अभिरुचि, उत्साह, विश्वास एवं एकजुटता का प्रतीक है | तब से निरंतर प्रत्येक वर्ष पूरा विश्व उत्सव , उमंग के साथ “अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस” माना रहा है जो वर्तमान समय मे योग की अत्यंत प्रासंगिकता को स्पष्ट करता है |

निष्कर्ष

श्रीमद्भागवद्गीता एक समग्र योग ग्रन्थ है जिसमें योग के विभिन्न आयामों का बड़ा ही सुन्दर एवं व्यावहारिक उपदेश किया गया है| जिसमें प्रसिद्ध महाभारत के महायुद्ध में अर्जुन को विषाद ग्रस्त हो कर अपने उपयुक्त कर्तव्य कर्म की पहचान हेतु विस्तृत व्यवहारिक उपदेश हुआ है | जिससे व्यक्ति सरलता से अपने वास्तविक स्वरुप को पहचान कर , उपयुक्त लक्ष्य निर्धारण एवं निरंतर निष्काम कर्म द्वारा जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है | गीता में अलग अलग प्रकार के स्वाभाव वाले व्यक्तियों के अनुसार योग के कई प्रकारों जैसे - ज्ञान योग, कर्म योग, ध्यान योग , भक्ति योग आदि का व्यावहारिक उपदेश हुआ है जिसमे से व्यक्ति अपने प्रकृति के अनुसार उपयुक्त योग मार्ग का चयन कर सरलता से सफलतापूर्वक अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर इस जीवन को सार्थक कर सकता है | वर्तमान समय में श्रीमद्भागवद्गीता में वर्णित योग स्वास्थ्य, सुरक्षा, व्यक्तित्व निर्माण, समाजिक, अध्यात्मिक, राष्ट्र एवं वैश्विक परिदृश्य में अत्यंत ही प्रासांगिक है |

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2000) "ईशादि नौ उपनिषद् ", गोरखपुर : गीताप्रेस
2. गोयन्दका, हरिकृष्णदास (2000). "पातंजलयोगदर्शन ", गोरखपुर : गीताप्रेस
3. तीर्थ, ओमानन्द (2006)" पातंजल योग प्रदीप", गोरखपुर ; गीताप्रेस
4. नौटियाल, विनोद (2012), "योग एवं मानसिक आरोग्य", इलाहबाद ; किताब महल
5. भट्ट, नवीन चन्द्र व वर्मा, विश्वजीत (2021), "समग्र योग महाविज्ञान", नई दिल्ली: किताब महल प्रकाशन
6. रामसुखदास (२०६७),"गीता - प्रबोधनी", गोरखपुर: गीताप्रेस
7. रामसुखदास. (2005). "श्रीमद्भगवद्गीता (साधक संजीवनी)", गोरखपुर: गीताप्रेस
8. विवेकानन्द (2001), "भक्तियोग", नागपुर ; रामकृष्ण मठ
9. शर्मा,श्रीराम (1968) "पातंजल योग का तत्त्व दर्शन", मथुरा: युग निर्माण योजना
10. शर्मा,श्रीराम (2005) "108 उपनिषद् " ,मथुरा: युग निर्माण योजना
11. सरस्वती, निरंजनानंद. (2011). "घेरंड संहिता" , मुंगेर: योग पब्लिकेशन ट्रस्ट
12. सिंह,रामहर्ष (1989),"योग एवं यौगिक चिकित्सा", नई दिल्ली; चौखम्भा संस्कृत प्रकाशन
13. स्वात्माराम (2001) "हठप्रदीपिका", पुणे : योग समिति लोनावाला